Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 SHISRRJ | Volume 3 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

कौल-ज्ञान एवं इसकी प्रासंगिकता

डॉ0 अरुण कुमार त्रिपाठी
(तिघरा, नगहरा, बस्ती)
48/18 HIG योजना–2 झूँसी
इलाहाबाद– 211019

Article Info
Volume 3, Issue 6
Page Number : 114-118

Publication Issue :
November-December-2020

Article History
Accepted : 10 Nov 2020
Published : 24 Nov 2020

सारांश- भगवान शंकर के द्वारा देवी पार्वती को बताए गए ज्ञान में ही कौल ज्ञान को भी समाहित माना जाता है। कहा जाता है कि कौलज्ञान परम सिद्धि दायक होता है। इस कौलज्ञान के प्रवर्तक मत्स्येंद्रनाथ माने जाते हैं। कुल अर्थात शक्ति और अकुल अर्थात शिव के बीच संबंध स्थापित होने को ही कौल मार्ग कहा गया है। इसलिए कौल साधना का लक्ष्य कुल और अकुल के बीच संबंध स्थापित करना है। तथा इसका प्रमुख कर्तव्य शिव शक्ति कुंडलिनी को जागृत करना है क्योंकि शक्ति ही महाकुंडलिनी के रूप में जगत में व्याप्त है। यही कुंडलिनी शक्ति जब सहस्रार में स्थित परम शिव से मिलती है तब परमानंद की प्राप्ति होती है। यही परमानंद की प्राप्ति करना ही कौल साधना का लक्ष्य है। प्रस्तुत शोध लेख में कौल ज्ञान के इन्हीं पहलुओं पर चर्चा किया गया है।

मुख्यशब्द : – कौल, ज्ञान, भगवान शंकर, देवी, पार्वती, शक्ति, महायोगी मत्स्येन्द्रनाथ।

महायोगी मत्स्येन्द्रनाथ को ही कौल–ज्ञान का आदि प्रवर्तक माना गया है। उन्हें सकल–कुलशास्त्र का अवतारक कहा जाता है। अनेक ग्रन्थों में प्रमाण मिलते हैं, जिसके अनुसार, कौलज्ञान एक कान से दूसरे कान तक चलता हुआ दीर्घकाल से चला आ रहा है।[1] कौल ज्ञान निर्णय का चौदहवां अध्याय देवी की उक्ति से प्रारम्भ होता है तथा आगे शिव (भैरव) देवी को ऐसी विधि बता रहे हैं, जिसमें मंत्र, प्राणायाम और चक्रध्यान की जरूरत नहीं होती और फिर भी वह परम सिद्धिदायक होती है। कौलज्ञाननिर्णय के सोलहवें अध्याय में सतयुग, द्वापर, त्रेता तथा कलयुग चारों युगों के चारों अवतारों पर प्रकाश डाला गया है। आशय है कि सतयुग (आदि) में कौलज्ञान, त्रेतायुग में 'महत्कौल', द्वापर में 'सिद्धामृत' और कलिकाल में 'मत्स्योदर कौल' नाम से जाना गया–

भक्तियुक्ता समत्वेन सर्वे शृण्वन्तु कौलिकम् ।।
महाकौलात् सिद्धकौलं सिद्धकौलात् मसादरम् ?
चतुर्युगविभागेन अवतारं चोदितं मया।।
ज्ञानादौ निर्णिति: कौलं द्वितीये महत्संज्ञकम् ।
तृतीये सिद्धामृतं नाम कलौ मत्स्योदरं प्रिये।।
ये चास्मिन्निर्गता देवि वर्णमिष्यामि तेऽखिलम् ।

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

एतस्माद् योगिनीकौलात् नाम्ना ज्ञानस्य निर्णितौ।।[2]

अर्थात् भक्तियुक्त होकर सब लोग उस तत्व को समान भाव से सुनें (जिसे भैरव) शिव ने अब तक सिर्फ पार्वती और षड़ानन आदि को ही सुनाया है) ज्ञ् महाकौल के बाद सिद्धकौल और सिद्धकौल के बाद मस्त्योदर का अवतार हुआ। इस प्रकार चारो युगों में शिव ने चार अवतार धारण किया। प्रथम युग में उनके द्वारा निर्णीत ज्ञान का नाम 'कौलज्ञान', द्वितीय में निर्णीत ज्ञान का नाम 'सिद्धकौल', तृतीय में निर्णीत ज्ञान का नाम **'सिद्धामृत'** और चतुर्थयुग में अवतरित ज्ञान का नाम **'मत्स्योदर'** है। इसमें (मत्स्योदर) विनिर्गत ज्ञान का नाम योगिनी कौल है।

परवर्ती साहित्यों में नाथपंथियों के लिए 'सिद्ध' शब्द का प्रयोग हुआ है तथा नाथपंथी अपने को सिद्धमार्ग का अनुयायी कहते हैं। द्वापर युग का सिद्धमार्ग उस श्रेणी का नहीं था जिसे बाद में मत्स्येन्द्रनाथ ने अपने कौलज्ञान के रूप में आख्यायित किया। कथाओं में वर्णन प्राप्त होता है कि मत्स्येन्द्रनाथ अपना असली मत छोड़कर कदली देश (कामरूप, आज का असम एवं ईर्द-गिर्द का क्षेत्र) की स्त्रियों की माया में फँस गए थे। गोरक्षविजय में यह स्पष्ट है कि ये स्त्रियाँ योगिनी थीं। कौलज्ञान निर्णय भी पुष्टि करता है कि यह ज्ञान कामरूप की स्त्रियों के घर-घर में विद्यमान था तथा यहीं पर मत्स्येन्द्रनाथ ने संकलन किया था –

तस्य मध्ये इमं नाथ सारभूतं समुद्धृतं।

कामरूपे इदं शास्त्रं योगिनीनां गृहे-गृहे।।[3]

यहाँ पर शिव द्वारा सिद्धामृत मार्ग का उपदेश सुन लेने पर मत्स्येन्द्रनाथ को उपदेश विस्मृत होने के लिए शाप देने की कथा का स्मरण करें तो, इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि –

मत्स्येन्द्रनाथ पहले सिद्ध मार्ग के अनुयायी थे, बाद में उपदेश विस्मृत हो जाने पर (कदली देश, कामरूप) में जाकर वाममार्गी साधना में प्रवृत्त हुए और वहाँ से कौल ज्ञान का संकलन किया तथा इसके पश्चात् अपने योग्य शिष्य गोरखनाथ के द्वारा याद दिलाने पर पुनः सिद्ध मार्ग अपना लिये थे।

कुल से अकुल का संबंध स्थापना ही कौल मार्ग है। कुल का अर्थ शक्ति (पार्वती) और अकुल का अर्थ (शिव) है। सौभाग्य भास्कर में इसका वर्णन करते हुए कहा गया है –

कुलं शक्तिरितिप्रोक्तमकुलं शिव उच्यते।

कुलेऽकुलेस्य संबंधः कौलमित्यभिधीयते।।[4]

अर्थात् कुल और अकुल का समन्वय कर समरस बनाना ही कौल साधना का लक्ष्य है और कुल और अकुल का सामरस्य ही कौल ज्ञान है। शिव की सृष्टि करने की इच्छा का नाम ही शक्ति है। शक्ति से समस्त पदार्थ उत्पन्न हुए हैं। शक्ति शिव की प्रिया हैं। शिव और शक्ति में कोई भेद नहीं है। चन्द्रमा का चन्द्रिका से जो संबंध है वहीं शिव और शक्ति का संबंध है। गोरक्ष-सिद्धान्त-संहिता में इसे उद्धृत किया गया है –

शिवस्याभ्यान्तरे शक्तिः शक्तेरभ्यन्तरे शिवः।

अन्तरं नैव जानीयात् चन्द्रचन्द्रिकयोरिव।।

सिद्धसिद्धान्तसंग्रह में वर्णन प्राप्त होता है कि–

वर्णगोत्रादिसाहित्यादेक एवाकुलं मतम् ।

अनन्त्वादखण्डत्वादद्वयत्वादनाशनात् ,

निर्धर्मत्वादनंगत्वदकुलं स्यान्निरन्तरम् ।

कुलस्यसामरस्येति सृष्टि हेतुः प्रकाशभूः।

सा चापरंपरा शक्तिराज्ञेशस्यापरं कुलम् ।

प्रपञ्चस्य समस्तस्य जगद्रूपप्रवर्तनात्।।[5]

अर्थात् – शिव अनन्य, अखण्ड, अद्वय, अविनाशक, धर्महीन और निरंग हैं इसीलिए उन्हें अकुल कहा जाता है। चूँकि शक्ति सृष्टि का हेतु है और समस्त जगत रूपी प्रपंच की प्रवर्तिका है इसलिए उसे कुल (वंश) कहते हैं। इतना ही नहीं शक्ति के बिना शिव कुछ भी करने में असमर्थ हैं।[6] इसी को देवी भागवत में कहा गया है कि –

शिवोऽपिशवतां याति कुण्डलिन्या विवर्जितः।

अर्थात् शक्ति के बिना शिव कुछ भी नहीं कर सकते। इकार शक्ति का वाचक है और शिव में से इकार निकाल देने से वह 'शव' हो जाते हैं। इसीलिए शक्ति ही उपास्य है। इस शक्ति की उपासना करने वाले शाक्त लोग ही कौल हैं।

कौलज्ञान निर्णय में भी शिव और शक्ति का यह सम्बन्ध प्रतिपादित किया गया है –

न शिवेन विना शक्तिर्न शक्तिरहितः शिवः।

अन्योऽन्यं च प्रवर्तन्ते अग्निधूमौ यथा प्रिये।

न वृक्षरहिता छाया नच्छाया रहितो द्रुमः।।[7]

अर्थात् जिस प्रकार से वृक्ष के बिना छाया नहीं रह सकती, अग्नि के बिना धूप नहीं रह सकता उसी प्रकार शिव और शक्ति की एक के बिना दूसरे की कल्पना नहीं की जा सकती। इसी का ध्यान रखते हुए आदि गुरु शंकराचार्य ने भी सौन्दर्य लहरी के मंगलाचरण में ही लिखा है–

शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुं।

न चेदेवं देवो न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि।।[8]

सौभाग्य भास्कर में कुल का योगपरक अर्थ बताते हुए कहा गया है कि – 'कु' अर्थ पृथ्वी है और 'ल' का अर्थ 'लीन' होना। पृथ्वी तत्व मूलाधार चक्र में रहता है, इसलिए मूलाधार चक्र को 'कुल' कहते हैं। इसी मूलाधार से सुषुम्ना नाड़ी मिली हुई है, जिसके भीतर से उठकर कुण्डलिनी सहस्रार चक्र में परमशिव से सामरस्य स्थापित करती है, इसीलिए लक्षणा वृत्ति से सुषुम्ना को भी कुल कहते हैं। तत्त्वसार नामक ग्रन्थ में कुण्डलिनी को शक्तिरूप में बताया गया है। शक्ति ही सृष्टि है, और सृष्टि ही कुण्डलिनी। इसीलिए कुण्डलिनी को भी कुल कुण्डलिनी कहा जाता है।[9]

कौल साधक का प्रमुख कर्त्तव्य जीवशक्ति कुण्डलिनी को जागृत करना है। शक्ति ही महाकुण्डलिनी रूप से जगत् में व्याप्त है। मनुष्य के रूप में वही कुण्डलिनी रूप से स्थित है। कुण्डलिनी और प्राणशक्ति को लेकर ही जीव मातृकुक्षि में प्रवेश करता है। सभी जीव साधारणतः तीन अवस्थाओं में रहते हैं; जाग्रत, सुषुप्ति और स्वप्न अर्थात् या तो जीव जागता रहता है, या सोता रहता है, या स्वप्न देखता रहता है। इन तीनों अवस्थाओं में कुण्डलिनी शक्ति निश्चेष्ट रहती है। इन अवस्थाओं में इसके द्वारा शरीरधारण का कार्य होता है। मनुष्य के शरीर में कुण्डलिनी जागरण विषयक कुछ क्रम इस प्रकार है। पीठ में स्थित मेरुदण्ड जहाँ सीधे जाकर वायु और उपस्थ के मध्यभाग में लगता है, वहाँ एक स्वयंभु लिंग है जो एक त्रिकोणचक्र में अवस्थित है। इसे अग्नि चक्र कहते हैं। इसी त्रिकोण या अग्निचक्र में स्थित स्वयंभू लिंग को साढ़े तीन वलयों या वृत्तों में लपेटकर सर्पिणी की भाँति कुण्डलिनी अवस्थित है। इसके ऊपर चार दलों का एक कमल है जिसे मूलाधार चक्र कहते हैं। उसके ऊपर नाभि के पास स्वाधिष्ठान चक्र है जो छः दलों के कमल के आकार का है। इसके ऊपर मणिपूर चक्र है और उसके ऊपर, हृदय के पास अनाहत चक्र है। ये दोनों चक्र क्रमशः दस और बारह दलों के पद्मों के आकार के हैं। इसके ऊपर कंठ के पास विशुद्धा रूप चक्र है जो सोलह दल के पद्म के आकार का है। इसके ऊपर जाकर भूमध्य में आज्ञा नामक चक्र है, जिसके सिर्फ दो ही दल हैं। ये ही षट्चक्र हैं। इन चक्रों को क्रमशः जागृत कुण्डलिनी शक्ति पार करती हुई सर्वोच्च सातवें चक्र (सहस्रार) में परमशिव से मिलती है। इस चक्र में सहस्र दल होने के कारण इसे सहस्रा कहते है और परमशिव का निवास होने के कारण कैलाश भी कहते हैं। जैसा कि शिवसंहिता में वर्णित है कि –

अतऊर्ध्वं दिव्यरूपं सहस्रारं सरोरुहम् ।

ब्रह्माण्डव्यस्तदेहस्थं बाह्ये तिष्ठति सर्वदा।

कैलाशो नाम तस्यैव महेशो यत्र तिष्ठति।।[10]

अत: सहस्रार में परमशिव, हृत्पद्म में जीवात्मा और मूलाधार में कुण्डलिनी विराजमान हैं। जीवात्मा परमशिव से चैतन्य और कुण्डलिनी से शक्ति प्राप्त करता है इसीलिए कुण्डलिनी जीवशक्ति है। साधना के द्वारा सोई हुई कुण्डलिनी को जगा कर, मेरुदण्ड की मध्यस्थिता नाड़ी सुषुम्ना के मार्ग से, सहस्रार में स्थित परमशिव तक उत्थापन करना ही कौल साधना का कर्त्तव्य है।11 वहीं पर शिव का शक्ति से मिलन होता है। शिव-शक्ति का यह सामरस्य ही परम आनन्द है। इसका वर्णन अकुलवीरतन्त्र में भी किया गया है -

समरसानन्दरूपेण एकाकारं चराचरे।

ये च ज्ञातं स्वदेहस्थमकुलवीरंमहाद्भुतम्।।[12]

यह परमानन्द प्राप्त हो जाने के बाद साधक के लिए कुछ भी करना शेष नहीं रह जाता। यही कौल साधना का लक्ष्य है।
तंत्र शास्त्र के अनुसार कौलाचार में कोई भी नियम नहीं है। इस आचार के साधक साधना की सर्वोच्च अवस्था में उपनीत हो गए होते हैं। भावचूड़ामणि में शिव जी ने कहा है -

कर्दमे चन्दनेऽभिन्नं पुत्रे शत्रौ तथा प्रिये।।

श्मशाने भवने देवि तथा वै काञ्चने तृणे।

न भेदो यस्य लेशोऽपि स कौल: परिकीर्तित:।

अर्थात् कौल, कर्दम और चंदन में, पुत्र और शत्रु में, श्मशान और गृह में तथा स्वर्ण और तृण में लेशमात्र भी भेद बुद्धि नहीं रखते। इसी भाव को स्पष्ट करने के लिए मत्स्येन्द्रनाथ ने अकुलवीर तन्त्र में स्थापित किया है कि जब तक अकुलवीर रूपी अद्वैत ज्ञान नहीं तभी तक बाल बुद्धि के लोग नाना प्रकार की जल्पना करते रहते हैं, यह धर्म है, यह शास्त्र है, यह तप है, यह लोक है, यह मार्ग है, यह दान है, यह कल है, यह ज्ञान है, यह ज्ञेय है, यह शुद्ध है, यह अशुद्ध है, यह साध्य है, यह साधन है, यह तत्त्व है, यह ध्यान है - ये सब बाल बुद्धि के विकल्प हैं।[13] इतना ही नहीं वे कहते हैं कि "अथ किं बहुनोक्तेन सर्वद्वन्द्वविवर्जित:।'' अर्थात् योगी मत्स्येन्द्रनाथ का कहना है कि अधिक क्या कहें, वह व्यक्ति समस्त द्वन्द्वों से रहित हो जाता है। वस्तुत: योगी मत्स्येन्द्रनाथ के द्वारा अवतरित कौल शास्त्र का यही चरम लक्ष्य है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि मत्स्येन्द्रनाथ नाथपंथ के प्रथम सिद्ध थे। ये जालंधरनाथ के समकालीन तथा गोरखनाथ के गुरु थे। शिव के श्राप के कारण बीच में सिद्ध मार्ग को भूलकर त्रियाराज्य में वाममार्गी हो गये थे और अपने शिष्य गोरखनाथ के द्वारा स्मरण कराने पर पुन: सिद्धमार्ग अपना लिये। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने मत व्यक्त किया है कि कौलज्ञान निर्णय का लिपि काल ग्यारहवीं शताब्दी है। इसलिए इनका समय इसके पूर्व का ही होगा। सुप्रसिद्ध कश्मीरी आचार्य अभिनव गुप्त ने अपने तंत्रालोक में मच्छंद विभु को नमस्कार किया है, ये मच्छन्द विभु योगी मत्स्येन्द्रनाथ ही हैं। एस. के डे, (संस्कृत जिल्द-1 के अनुसार) अभिनव गुप्त का ईश्वर प्रत्यभिज्ञा की वृहती वृत्ति सन् 1015 ई. में तथा क्रम स्तोत्र की रचना 991 ई. में की थी। अत: स्पष्ट होता है कि मत्स्येन्द्रनाथ 991 ई. के पूर्व ही रहे होंगे। वज्रयानी सिद्ध कण्हपा ने स्वयं अपने गानों में जालंधरपाद का नाम लिया है। तिब्बती परम्परा के अनुसार योगी मत्स्येन्द्रनाथ राजा देवपाल के समकालीन थे। राजा देवपाल 809-49 ई. तक राज्य करते थे। अतएव सिद्ध होता है कि मत्स्येन्द्रनाथ 809 ई. के पूर्व थे। उज्जैन के महाराज विक्रमादित्य ने विक्रम संवत चलाया। इनके भाई महाराजा भर्तृहरि और बहन मयनावती गुरु गोरखनाथ के शिष्य थे। इन दोनों पर गुरु गोरखनाथ की बड़ी कृपा थी। महाराज भर्तृहरि ने शृंगारशतक, नीतिशतक तथा वैराग्यशतक नामक विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थों की रचना की है। गोरखनाथ के गुरु मत्स्येन्द्रनाथ थे। इस उद्धरण से स्पष्ट होता है कि मत्स्येन्द्रनाथ का समय विक्रम

संवत के प्रारम्भ होने के पूर्व का है। योगी मत्स्येन्द्रनाथ के समय का सुनिश्चयन करना अत्यन्त दुष्कर है। मत्स्येन्द्रनाथ कामरूप (आज के असम के चतुर्दिक क्षेत्र) के आस-पास कहीं पैदा हुये होंगे। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस स्थान का नाम चन्द्रगिरि बताया है जो बंगाल के पास समुद्र के किनारे कहीं स्थित था। तिब्बती परम्परा में इसे ब्रह्मपुत्र से घिरे हुए किसी द्वीप पर बताया है। ये कौलज्ञान के प्रवर्तक हैं। इनकी प्रमुख रचनाओं में कौलज्ञान निर्णय, अकुलवीरतन्त्र, कुलानन्द और ज्ञानकारिका है। ये योगियों के सर्वश्रेष्ठ मत-सिद्ध मत अनुशीलन के रूप में जगत् में अनेक प्राणियों को महाज्ञान का तत्वोपदेश प्रदान कर मुक्ति हेतु योगामृत ज्ञान की नौका प्रदान की। मत्स्येन्द्रनाथ की समाधि उज्जैन में क्षिप्रा नदी के तट पर है। समाधि-स्थल का आज भी दर्शन किया जा सकता है तथा पर्यटन विभाग ने इसे पर्यटक स्थल भी घोषित किया है, परन्तु अभी इन्हें अजर-अमर माना जाता है क्योंकि आस्थावान कुछ लोगों को आज भी इनके दर्शन प्राप्त हो जाते हैं।

सन्दर्भ

1. कौलज्ञान निर्णय - 6/9, 14/9 डॉ. प्रवोध चन्द्र बागची, कलकत्ता संस्कृत सिरीज नं. 3, कलकत्ता 1934।
2. वही - 16/46-49।
3. वही. 14/10।
4. सौभाग्य भास्कर पृ. 53।
5. सिद्ध सिद्धान्त संग्रह, महामहोपाध्याय पं. गोपीनाथ कविराज, सरस्वतीभवन टे.-, 13 काशी 1925 ई. - चतुर्थ उपदेश, श्लोक सं. 10-13।
6. वही. 4/26।
7. कौल ज्ञान निर्णय डॉ. प्रवोध चन्द्र बागची, कलकत्ता संस्कृत सिरीज नं. 3 कलकत्ता 1934 -1aa1a111 17/8-9।
8. सौन्दर्यलहरी - आदिगुरु शंकराचार्य - 1।
9. नाथ संप्रदाय, - डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद सं. 2012, पृ. 64-65।
10. शिवसंहिता पाणिनि आफिस, इलाहाबाद 1914 - 5/151-152।
11. सिद्धसिद्धान्त संग्रह महामहोपाध्याय पं. गोपीनाथ कविराज, सरस्वती भवन टे. 13, - 5/11।
12. अकुलवीरतन्त्र -बी.-115।
13. अकुलवीरतन्त्र - ए - 78/87। चतुराशीतिसिद्धप्रवृत्ति, तन्जूर 86/1, कॉर्डियर पृ. 247।